अध्याय : पंचम

मेवाड़ प्रशासन में प्रमुख ऐतिहासिक घरानों का योगदान

5.0 भामाशाह–घराना : मेवाड़ प्रशासन में योगदान –

भामाशाह 'कावड़िया' गोत्र का ओसवाल जैन वैश्य था। इसके पूर्वज दिल्ली के रहने वाले थे, वहां से चलकर ये कभी अलवर में आकर बस गये थे।[1] इनके पूर्वजों का विशेष वृत्तान्त नहीं मिलता। यह वंश मूल में तोमर वंशी राजपूत था जिसने बाद में जैन धर्म अंगीकार कर लिया था।[2]

भामाशाह के पिता का नाम भारमल्ल और माता का नाम कर्पूरदेवी था जो नादेचा गोत्र की थी। इनके दो पुत्र हुए – भामाशाह और ताराचन्द। भामाशाह बड़ा और ताराचन्द छोटा था।

'प्रधान' का पद प्राप्त होना –

हल्दीघाटी युद्ध में महाराणा प्रताप के अनेक विश्वसनीय वीर सरदार मारे जा चुके थे। जो बचे थे वे बहुत थोड़े थे। भामाशाह जैसे अतरग और योग्य व्यक्ति को पहचान कर व्यवस्था और सैनिक क्षमता की दृष्टि से उपयोगी मानकर महाराणा प्रताप ने भामाशाह को अपना 'प्रधान' बनाया तथा रामाशाह महासहाणी को इस पद से हटा दिया।

भामाशाह ने हल्दीघाटी युद्ध में अपनी सैनिक कुशलता का परिचय दिया था, परन्तु प्रधान के पद पर रहते हुए उसने अनेक बार अपनी प्रशासनिक, सैनिक और प्रबन्धक कुशलता को प्रदर्शित किया। यही नहीं वह अच्छा भवन–निर्माता भी सिद्ध हुआ।

हल्दीघाटी युद्ध 18 जून, 1576, ज्येष्ठ शुक्ल 2, सं. 1633 को लड़ा गया। इसके ठीक बाद भामाशाह को प्रधान बना दिया गया, क्योंकि भाद्रपद

सुदि 5, सं. 1633 (अगस्त, 1576) के सथाणा गांव के ताम्रपत्र में, जो कुम्भलगढ़ में महाराणा प्रताप के आदेश से दिया गया था, भामाशाह का उल्लेख है जिसने इसे जारी करवाया था। अतः स्पष्ट है कि अगस्त 1576 तक भामाशाह 'प्रधान' नियुक्त किया जा चुका था। वैसे भामाशाह को महाराणा प्रताप के राज्यारोहण के काल से ही कोषाधिकारी और आर्थिक प्रबन्ध की जिम्मेदारी सौंप दी गई थी।[3] जब भामाशाह को 'प्रधान' का पद सौंपा गया लगभग उसी समय उसके भाई ताराचन्द को गोड़वाड़ के विस्तृत भूभाग का स्वतन्त्र गवर्नर नियुक्त किया गया। भामशाह ने मुगलों के विरूद्ध दिवेर के युद्ध में महाराणा प्रताप की सैन्य शक्ति को सम्बल देते हुए स्वयं भी युद्ध भूमि में लड़ा। उल्लेखनीय है कि महाराणा प्रताप के शासन प्रबन्धन और मुगल सत्ता के विरूद्ध सभी युद्धों में त्याग और समर्पण कर स्वामीभक्ति का उच्च आदर्श स्थापित किया।

भामाशाह की एक पुत्री थी, जिसका नाम जगीशा बाई मिलता है। इसका विवाह बीकानेर के सुप्रसिद्ध बच्छावत परिवार के कर्मचन्द के साथ हुआ था। कर्मचन्द संग्राम का पुत्र था। इस वंश में प्रारम्भ से ही सब लोग बीकानेर राज्य के मंत्री रहे। राव बीका ने जांगल प्रदेश में बीकानेर की स्थापना की एवं अपने स्वतन्त्र राज्य की नींव डाली। वत्सराज उसका मंत्री रहा। वह बहुत प्रसिद्ध हुआ। वत्सराज के वंशज 'बच्छावत मेहता' कहलाए।

5.1 बोलिया घराना –

मेवाड़–मुगल संधि (सन् 1615 ई.) का सूत्रधार : प्रधानमंत्री शाह रंगोजी बोलिया –

भारत में मध्यकालीन मुस्लिम शासकों ने प्रारम्भ से ही युद्ध एवं सैन्य शक्ति और कूटनीति के बल से मेवाड़ को अपने अधीन करने का सतत

प्रयत्न किया परन्तु वे असफल ही रहे। उन्होंने कभी भी मुगलों की अधीनता स्वीकार नहीं की। यह महान् गौरव की बात थी, परन्तु लगभग चार युग के निरन्तर संघर्ष के उपरान्त विषम परिस्थितियों में महाराणा अमरसिंह प्रथम एवं बादशाह जहाँगीर के बीच सन् 1615 ईस्वी में सम्मानजनक संधि का श्रेय शाह रंगोजी बोलिया को है। बोलिया परिवार के इतिहास पुरूष प्रारम्भ से ही सैन्य एवं प्रशासनिक पदों पर रहे, जिसकी स्वामीभक्ति को देखते हुए रंगोजी बोलिया एवं उनके उत्तराधिकारियों को मेवाड़ में प्रशासनिक सेवाओं के एवज में भूमि, जागीर, सम्मान दिया जाता था। इसकी बोलिया वंश के हाल ही में प्राप्त अभिलेखों से पुष्टि होती है।

मेवाड़ – मुगल संधि (सन् 1615 ई.) –

दिनांक 5 फरवरी, 1615 की मुगल मेवाड़ सन्धि[4] का विस्तृत विवरण केवल तुजुके जहांगीरी[5] या जहांगीरनामें में मिलता है। मुंहता नैणसी की ख्यात जैसे ग्रन्थों में संकेत मात्र उपलब्ध हैं ''टॉड कृत राजस्थान, वीर विनोद'' अथवा परवर्ती ऐतिहासिक पुस्तकों के लिए ये ही आधार रहे हैं। स्थानीय स्त्रोतों का उपयोग अद्यावधि नहीं के बराबर ही हुआ है। हाल ही में मुझे मेवाड़ इतिहास में योगदान देने वाले संकटमोचक बोलिया घराने के अप्रकाशित अभिलेख प्राप्त हुए हैं, जिनसे यह प्रमाणित होता है कि महाराणा अमरसिंह प्रथम और जहांगीर के मध्य हुए इस समझौते का सूत्रधार शाह रंगोजी बोल्या ही थे। रंगोजी बोल्या के योगदान की जानकारी बोलिया परिवार के उपलब्ध अभिलेखों से होती है संधि की परिस्थितियों व शर्तों का विवरण दिया गया है।

शाह रंगोजी बोलिया : मुगल सम्राट जहाँगीर और महाराणा अमरसिंह प्रथम के मध्य हुई संधि[6] (5 फरवरी सन् 1615 ई.) के प्रमुख सूत्रधार –

वस्तुतः महाराणा प्रताप की मृत्यु के बाद जहाँ एक ओर मेवाड़ के महाराणा अमर सिंह प्रथम और उसके सरदार, सेना और जनता दीर्घकालीन मुगलों से संघर्ष कर रही थी तो दूसरी ओर अकबर की मृत्यु के उपरान्त जहाँगीर और उसकी सेना भी मेवाड़–मुगल संघर्ष से मुक्ति पाना चाहती थी ऐसी परिस्थितियों के दौरान निहाचन्द बोलिया के प्रपौत्र रंगोजी बोल्या जो मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह जी (प्रथम) की सेवा में आये। उल्लेखनीय है कि मुगल सम्राट जहाँगीर और राणा अमरसिंह के मध्य सन् 1615 ई. में सम्पन्न हुई, इस सम्मानजनक संधि के प्रमुख सूत्रधार श्री रंगोजी बोल्या ही थे। **रंगोजी की इस सेवा के बदले में महाराणा अमरसिंह ने उन्हें मेवाड़ राज्य के प्रधान का पद सौंपा। साथ ही हाथी पालकी और अक्षत व मोतियों से सम्मानित किया गया। उन्हें 4 गाँवों की जागीरी के पट्टे दिये गये। (1) भानपुरा, (2) काणोली, (3) मेवदा और (4) जामुणा जिनके पट्टे इस वंश वाले के पास वर्तमान में मौजूद है। रंगोजी ने उदयपुर में मोती चोहट्टा में घुमटी वाली छतरी अपनी हवेली के ऊपर बनाई। इस प्रकार की घुमटी वाली छतरी किसी हवेली पर बनाने का अधिकार महाराणा सा. की ओर से किसी विशेष व्यक्ति को ही दिया जाता था।** रंगोजी को यह सम्मान मिला। यह हवेली कालान्तर में करजाली ठिकाने के महाराज श्री सूरतसिंह जी को दे दी गई। हवेली में अब भी स्मृति सूचक एक शिलालेख स्थित कहा जाता है। रंगोजी पर्याप्त ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे तथा साथ में धर्म प्रेमी व दानवीर भी थे। अपने जीवन में

उन्होंने एक–एक लाख प्रसाव के तीन दान किये। सं. 1719 में इन्होंने ''पुर'' में भगवान का भव्य मंदिर बनाया, मूर्ति की प्रतिष्ठा सं. 1799 में की गई और तीन दान भी किये। रंगोजी के भाई पंचाण थे। जिनके वंशज पंचावत कहलाते हैं। आपके 5 पुत्र हुए (1) चोरवा जी, (2) रेखाजी, (3) राजूजी, (4) श्यामजी और (5) पृथ्वीराज जी।

रंगोजी ने इन शर्तों को अपने स्वामी के सम्मान पर किसी भी प्रकार का आघात पहुँचाने वाला नहीं पाया। अतः दिल्ली से मेवाड़ महाराणा के सामने उसने बादशाह की उपर्युक्त शर्तें रखी। सभी सामन्तों ने अपनी विकट परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा इन शर्तें को स्वधर्म एवं राज्य पर किसी प्रकार से संकट लाने वाला न पाकर, उन्हें स्वीकार कर लिया और कुमार कर्णसिंह को बादशाही दरबार में दिल्ली भेजा। संधि की शर्तें निश्चित हो जाने पर मेवाड़ से शाही फौजें बाहर हटा दी गई।

मेवाड़–मुगल सन्धि[7] के बारे में मेवाड़ के इतिहास वीर विनोद, भाग–1 एवं पं. गौरीशंकर हीराचन्द औझा के द्वारा लिखित उदयपुर राज्य का इतिहास भाग–2 में तथा जहाँगीर ने अपनी आत्मकथा तुज्क–ए–जहाँगीरी में मेवाड़ के साथ सम्मानजनक सन्धि का उल्लेख किया है, परन्तु बोलिया परिवार के अभिलेखों में सन्धि की जिन शर्तों का उल्लेख हुआ है उनमें सन्धि का उद्देश्य व भावना में कोई अन्तर नहीं है, परन्तु शर्तों में अन्तर है। सम्भव है कि सन्धि के प्रारम्भ में दोनों पक्षों ने अपनी शर्तें विश्वस्त अधिकृत अधिकारियों के साथ लिख भेजी होगी और अंत में जहाँगीर द्वारा जारी फरमान में रंगोजी बोलिया और मेवाड़ के अन्य अधिकारियों की सलाह से संधि को अंतिम रूप दिया।

रंगोजी ने प्रधान (मंत्री) पद पर रहकर मेवाड़ के गांवों की सीमा का अंकन करवाया तथा जागीरदारों के गांवों की रेख भी निश्चित की।

रंगोजी बोलिया का नामोल्लेख हमें इन तीन ग्रंथों के अतिरिक्त अन्यत्र नहीं मिलता परन्तु रंगोजी के ही वंशज इस बोल्या परिवार के कई एक व्यक्तियों का हमें मेवाड़ और मेवाड़ के बाहर भी कोई महत्वपूर्ण उच्च पदों पर कार्य करने का उल्लेख मिलता है, जिनमें एकलिंगदास बोल्या का नाम प्रमुख है। प्रस्तुत सामग्री के आधार अंतिम दो ग्रंथ भी इसी परिवार की पैतृक सम्पत्ति रही है।[8]

5.2 पाणेरी घराने की भूमिका –

चीरवा गाँव का शिलालेख मेवाड़ में गुहिलवंशज 41वें शासक समरसिंह के राजत्वकाल में (वि.सं. 1330 से 1358 – ईस्वी सन् 1273 से 1301) वि.सं. 1330 की कार्तिक सुदी प्रतिपदा का है। इस शिलालेख में 51 श्लोक हैं एवं अन्तिम पंक्ति में संवत् गद्य में दिया गया है। इसमें गुहिलवंशी बाप्पा रावल में वंशज मथनसिंह, पद्मसिंह, जैत्रसिंह, तेजसिंह और समरसिंह के राज्यकाल की अमुक–अमुक घटनाओं का विवरण है। इसके साथ ही शिलालेख में उल्लेखित है कि जब मेवाड़ राज्य की राजधानी नागद्रह (नागदा) थी, तब वहां के राजा मथनसिंह ने वहां के ब्राह्मण जाति के ''उद्धरण'' को, जो दुष्टों को सबक सिखाने वाला तथा शिष्टों का रक्षण करने में कुशल था, को नागदा का तलारक्ष (कोतवाल – नगर रक्षक अधिकारी) बनाया। मथनसिंह के उत्तराधिकारी पद्मसिंह ने उद्धरण के आठ पुत्रों में से सबसे बड़े योगराज को नागदा का तलारक्ष बनाया। विप्र वेश धारण करने वाले योगराज ने पद्मसिंह से नागदा के निकट बड़ी आय वाला ''चिरकूप'' (चीरवा) गाँव पहले पहल पाया।

समृद्धिशाली योगराज ने योगेश्वर (शिव) और योगेश्वरी (देवी) के मन्दिर बनवाये। योगराज के चार पुत्र थे – पमराज, महेन्द्र, चंपक और क्षेम। योगराज का प्रथम पुत्र पमराज नागदा नगर टुटा, उस समय भूताला की लड़ाई में गुलामवंश के सुल्तान अल्तमश से लड़कर शहीद हो गया। महेन्द्र का पुत्र बलाक राजा जैत्रसिंह (राज्यकाल विक्रम संवत् 1270 से 1309) के आगे लड़ते हुए कोटड़ा के युद्ध में राणा त्रिभुवन के साथ लड़ाई में शहीद हो गया।[9] जैत्रसिंह ने योगराज के चौथे पुत्र क्षेम को चित्तौड़ की तलारक्षता (कोतवाली) सौंप दी। क्षेत्र के दो पुत्र थे – रतन और मदन। चित्तौड़ की तलहटी में राजा तेजसिंह के साथ बीसलदेव के युद्ध में रत्न शत्रुओं का संहार करता हुआ शहीद हुआ। मदन को राजा समरसिंह ने चित्तौड़ का तलारक्ष बनाया। तलारक्षता के बड़े पाप का विचार कर मदन ने अपना चित्त शिव पूजन आदि में लगाया।

उद्धरण के आठ पुत्रों में से पहले पुत्र योगराज का वंश उपरोक्त प्रकार फैला। दूसरे पुत्र रतभू का पुत्र केल्हण केल्हण का पुत्र उदयी और उदयी का पुत्र कर्मण हुआ। यही कर्मण (कर्मा) वर्तमान चीरवा गांव का संस्थापक कर्मा जी है। चीरवा का शिलालेख अनुसार तत्कालीन राजाओं एवं उनसे सम्बन्धित तलारक्षकों (नगररक्षक अधिकारियों) का विवरण निम्न प्रकार है –

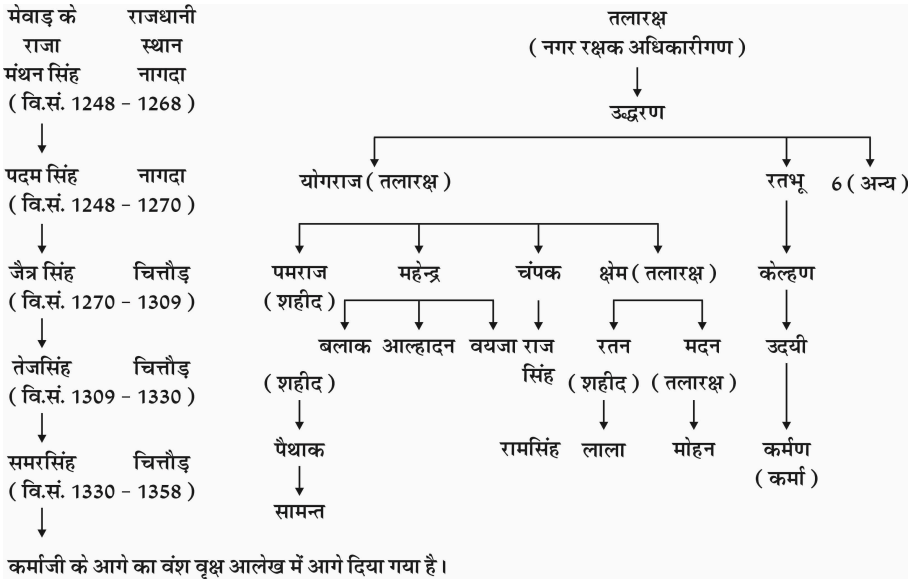

कर्माजी के आगे का वंश वृक्ष आलेख में आगे दिया गया है।

राजा लक्षसिंह (लाखा) (वि.सं. 1439–1475) ने चीरवा गांव एकलिंग जी को भेंट किया। यह उल्लेख एकलिंग जी के दक्षिणी द्वार पर स्थापित प्रशस्ति में है। महाराणा रायमल के समय (वि.सं. 1530–1551) एकलिंग जी मन्दिर को भेंट किये गये कई गाँव पुनः बहाल किये गये।

वि.सं. 1633 (सन् 1576) हल्दीघाटी के प्रसिद्ध युद्ध में देलवाड़ा का जागीरदार झाला मानसिंह शाही फौज से लड़कर शहीद हुआ। उसके बेटे, शत्रुशाल, कल्याण व आसकरण थे। महाराणा प्रतापसिंह और शत्रुशाल, जो कि मामा–भान्जा थे, के बीच तकरार होने से महाराणा प्रताप ने कहा – शत्रुशाल नाम वाले को मैं कभी अपने राज्य में नहीं रखूंगा। महाराणा ने

देलवाड़ा की जागीर राठौड़ (बदनोर वाले) को दे दी। शत्रुशाल तो मेवाड़ छोड़कर जोधपुर चला गया। उसके छोटे भाई कल्याण एवं आसकरण ने उस समय चीरवा गांव में आश्रय लिया, क्योंकि चीरवा गाँव ब्राह्मणों का शासन (माफी) गाँव था।

चीरवा गाँव उत्तर की ओर से उदयपुर शहर का एवं दक्षिण की ओर से एकलिंग जी का प्रवेश द्वार होने से इसका तत्कालीन समय में काफी सामरिक महत्व रहा है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि यह गाँव मेवाड़ के राजा (श्री एकलिंगनाथ) के दक्षिण की ओर से एवं राजधानी (उदयपुर) के लिये उत्तर की ओर से बाह्य सुरक्षा पंक्ति (Outer Line of Diffence) रहा है।

महाराणा अमर सिंह (द्वितीय) (वि.सं. 1755 से 1767) को अपनी सेना के लिए रूपयों की आवश्यकता थी। उन्होंने खालसे की प्रजा, जागीरदारों अहलकारों के साथ–साथ ब्राह्मणों तथा चारण भाटों के शासनिक गाँवों (माफी) से भी रूपये वसूली चाही।[10] इस पर खालसे की प्रजा जागीरदारों एवं अहलकारों के साथ–साथ ब्राह्मणों ने भी छः लाख रूपये पुरोहित के मारफत महाराणा को दिये।

चीरवा गाँव के बड़वे एवं स्थानीय बुजुर्गों के अनुसार मेनारिया समाज के पूर्वज श्री कर्मा जी व श्री योगेश्वर जी दोनों भाई पावनस्थली श्री एकलिंग जी में आये थे। श्री योगेश्वर जी वहीं रहे तथा अपनी आयु पूर्ण कर देवलोक गमन हुए। उनकी समाधी बाघेला तालाब गणेश घाटा द्वार के पास से श्री धारेश्वर जी के लिए बने पैदल मार्ग के पास बनी है। आज भी सभी मेनारिया परिवार शादी–विवाह एवं शुभ कार्यों के समय इस समाधी ''गोतरतां'' पर शीश नवाकर आशीर्वाद ग्रहण करते हैं। बड़वे की

जानकारी कई बार अपुष्ट होती है एवं बुजुर्गों के पास बड़वों से प्राप्त जानकारी ही सुलभ रहती है। ऐसे में पुराने इतिहासकारों के अनुसार संभवतः योगराज (तलारक्ष नागदा) ही योगेश्वर है। जिनकी समाधी श्री धारेश्वर जी के मार्ग पर स्थित है। श्री कर्मा जी योगराज के भाई रतभू के वंशज है, जैसा कि तलारक्ष उद्धरण के वंशवृक्ष में उल्लेखित है। इतिहासकारों ने योगराज को टांटेड जाति का बताया है। यह उनका तत्कालीन स्थानवाचक उपनाम रहा है, जो कालान्तर में चीरवा गांव के ब्राह्मणों का मेनार से सम्बद्ध होने से मेनारिया उपनाम हुआ। योगराज (तलारक्ष नागदा) के वंशज जब मेवाड़ की राजधानी चित्तौड़ स्थानान्तरित हुई, उस समय वे चित्तौड़ चले गये। कालान्तर में चीरवा गाँव[11] की माफी (शासन) कर्मा जी को प्राप्त हुई। इन तथ्यों के बारे में आगे और भी खोज की आवश्यकता है।

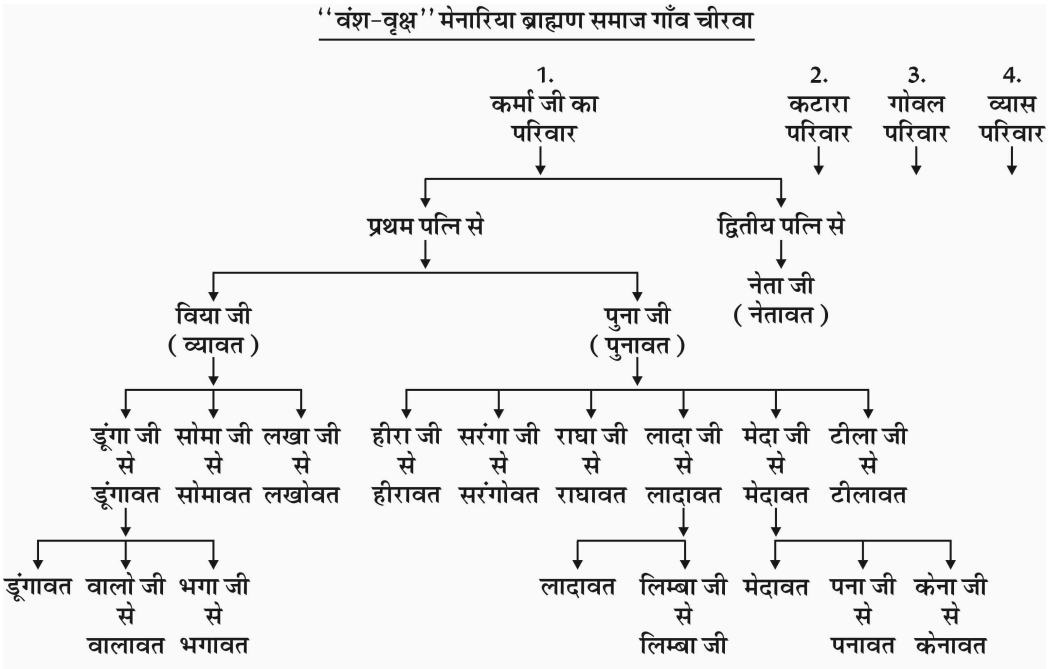

वर्तमान में गाँव में डूंगावत, वालावत, भगावत, सोमावत, लखोवत (सभी व्यावत), हीरावत, सरंगोवत, राघावत, लादावत, मेदावत, केनावत (सभी पुनावत), कटारा, गोवल एवं व्यास परिवार आवासित है।

5.3 हल्दीघाटी युद्ध का अमर शहीद : कल्याण जी पानेरी –

महाराणा प्रताप का नाम इतिहास के पृष्ठों में स्वतन्त्रता, स्वाभीमान, स्वराष्ट्र प्रेम एवं सनातन धर्म, संस्कृति के महानायकों में सत्युत्य है। प्रताप के उज्जवल कार्यों और उसके उदात्त मानवीय चारित्रिक गुणों के आधार पर ब्रिटिश इतिहास लेखक कर्नल जेम्स टॉड ने लिखा कि मुगल सम्राट के विरूद्ध निरन्तर संघर्ष के दौरान अरावली की घाटी में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा जो लियोनिडास (ग्रीक योद्धा) हो, कोई ऐसी स्थली नहीं थी जो युनान की थर्मोपल्ली हो, निश्चय ही हल्दीघाटी भारत की थर्मोपल्ली (ई.पू. 488 में ईरान–युनान के मध्य ऐतिहासिक रणभूमि) और दीवेर इसका मैराथन (यूनान के प्रायद्वीप में वह युद्ध स्थल जहाँ युनानी सेनाओं ने साम्राज्यवादी ईरानियों से यूनान के देशों को मुक्त कराये)

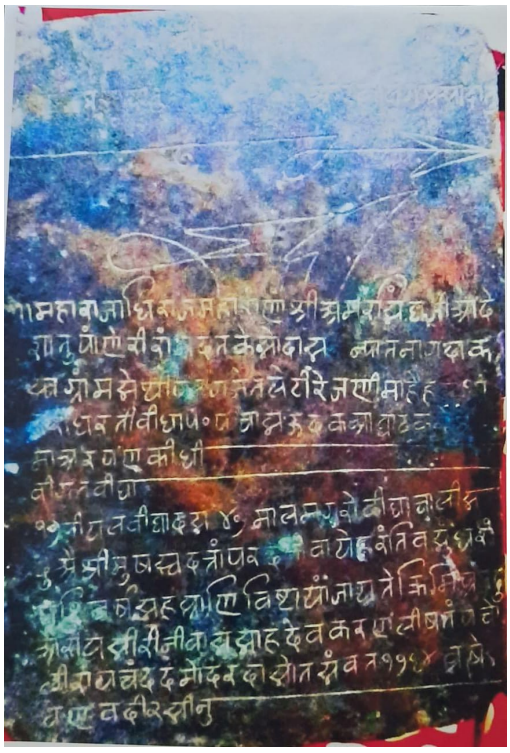

महाराणा प्रताप एवं साम्राज्यवादी मुगलसत्ता के मध्य हुए 19 बार छोटी मोटी लड़ाईयाँ हुई परन्तु 18 जून 1576 के हल्दीघाटी के युद्ध में

प्रताप के साथ मातृभूमि की रक्षार्थ हिन्दू, मुस्लिम, राजपूत, ब्राह्मण, वैश्य, भील एवं अन्य समस्त वर्गों के लोगों ने भाग लिया। जिनमें हकीमखां सूरी, ग्वालियर का राजा रामशाह तंवर, उसका पुत्र शालीवाहन, झाला मान सिंह (बड़ी सादड़ी), वीर जयमल का पुत्र राठौड़ रामदास, देवगढ़ का रावत सांगा चूण्डा, जगमाल चूण्डावत पुत्र सांगा चूण्डावत, कल्याणजी पानेरी (मेनारिया ब्राह्मण गवारड़ी का), चारण अभयचन्द, देसूरी का खान सोलंकी, रामासिंह व प्रतापसिंह चूण्डावत, भाई कृष्णदास, देलवाड़ा का मानसिंह झाला, डोडिया भीमसिंह इत्यादि ने प्राणोत्सर्ग किया। ऐसे अज्ञात सैनिक एवं जन यौद्धा भी लड़े एवं शहीद हुए जिनके स्मृति स्मारक बनास नदी एवं बेड़च के मध्य रहने वाले लोगों ने अपने–अपने पूर्वजों के बनवाये जो खेतों, खलियानों एवं गाँवों के चौराहों पर देखे जा सकते हैं।

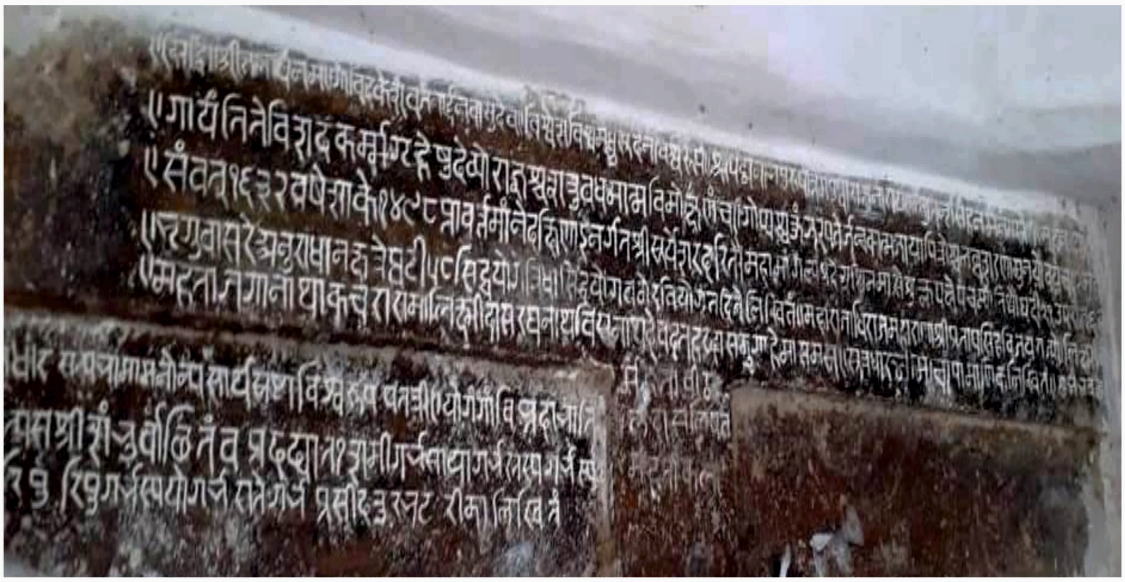

ग्राम खरसाण के चारभुजानाथ मन्दिर के प्रवेश द्वार पर उत्कीर्ण महाराणा प्रताप कालीन दुर्लभ शिलालेख
विक्रम संवत् 1632, शक वर्ष 1498 (ईस्वी सन् 1576) हल्दीघाटी युद्ध में महाराणा प्रताप के विजय महोत्सव पर उत्कीर्ण

(10 अगस्त, सन् 2015 ई.) फोटो प्रति –
खोजकर्ता – डॉ. जी.एल. मेनारिया, इतिहासकार

मेनार का गैर नृत्य (महाराणा प्रताप का हल्दीघाटी युद्ध – विजयोत्सव परम्परा का प्रतीक)

ऐसे अमर शहीदों में महाराणा प्रताप के सहयोगी रहे कल्याणजी पानेरी का नाम उन अज्ञात शहीदों की सूची में है। गवारड़ी गाँव (जिला राजसमन्द तहसील रेलमगरा) के इस वीर योद्धा कल्याणजी एवं उसकी सहगामी लालीदेवी का स्मृति स्मारक उक्त गाँव के चारभुजा मन्दिर के प्रमुख चौराहे पर विद्यमान है। स्थानीय राव परिवार के रिकॉर्ड बही में कल्याणजी पानेरी के पूर्वजों एवं उसके उत्तराधिकारी वंशावली से ज्ञात होता है कि बाप्पा रावल के समय नागदा के नरेश जोशी की पीढ़ियों में हुआ था।

गवारड़ी गाँव के अमर शहीद कल्याणजी पानेरी एवं उनकी पत्नि लालीबाई का स्मारक (फोटो सौजन्य कल्याणजी के परिवार के श्री बद्रीलाल द्वारा)

5.4 मेवाड़ का पुरोहित घराना : एक परिचय –

नागदा पालीवाल ब्राह्मणोत्पत्ति –

ब्राह्मणों की यों तो अनेक जातियां हैं, पर मुख्यतया 10 जातियां हैं। इनमें से 5 तो पंचगौड़ और 5 पंचद्राविड़ कहलाती हैं। पंचद्राविड़ में गौड़, कान्यकुब्ज, सारस्वत, मैथिल और उत्कल है। ये दशों देश–प्रदेश के नाम हैं, इनमें रहने के कारण था इनसे निकलकर अन्यत्र जाने से भी वे इन्हीं नामों से पुकारे जाते हैं।[12] पालीवाल नाम कैसे हुआ, इसमें कई मतभेद हैं। कोई तो पालीवालों का निर्गम स्थान पाली (मारवाड़) मानते हैं और कुछ लेखक पाली (गुजरात) कहते हैं।

पाली (गुजरात) निर्गम स्थान मानने के प्रमाण हैं –

1) नाथद्वारा निवासी स्व. पं. बालकृष्णजी पुरोहित (मूल गांव बागोल वाले) ने दिनांक 05/02/37 ई. को एक लेख प्रकाशित किया उसकी निम्न पंक्तियाँ उद्धृत की जाती हैं –

'श्री स्थल सिद्धपुर साम्प्रदायी राजामूल के दत्त ग्राम 171 पाली नगर उपनाम पालनपुर तथा पालीताणें के ब्राह्मण पालीवाल जातीय पंच द्राविड़ टोलकिए तथा औदिच्य श्रीमान् मेवाड़ाधीश के पास आकर पुरोहिताई प्राप्त कर मेवाड़ में निवास करने लगे। जिनके वंशज 44 खेड़ा, 24 खेड़ा तथा बड़े पालीवाल अद्यावधि विद्यमान है।'

स्व. पं. बालकृष्ण जी ने बहुत अन्वेषण करके यह लेख लिखा –

2) स्वर्गीय बड़ा पुरोहित जी श्री भूपाललाल जी ने एक प्राचीन हस्तलिखित पुस्तक लेखक को बतलाई, उसमें लिखा है – 'पुरोहित सरशलजी के

पिता विजयदेव जी थे, ये औदिच्य ब्राह्मण थे, पर पाली (गुजरात काठियावाड़) में रहने के कारण पालीवाल कहलाए।'

3) 'महात्मा पदवाची जैन ब्राह्मणों का संक्षिप्त इतिहास' के पृष्ठ 130 पर यह लेख है – 'सरशलजी औदिच्य ब्राह्मण थे – पाली (गुजरात) से आने के कारण पालीवाल कहलाए – ये मारवाड़ – पाली से नहीं आए।'

4) 'पालीवाल संदेश आगरा' के एक लेख द्वारा भी ज्ञात हुआ – 'पाली (गुजरात) से आने वाला समुदाय मेवाड़ प्रान्त में अधिक तर बसा हुआ है। यह भाटों की पुस्तकों, प्राचीन लेख–पत्र तथा ताम्रपत्रों से प्रमाणित होता है।'

5) 'टॉड राजस्थान' नामक पुस्तक में टॉड साहब लिखते हैं – 'पाली के निवासी ब्राह्मण बड़े धनवान थे, दान नहीं लेते थे और व्यापार किया करते थे। कन्नौज के राजा स्वदेश द्रोही जयचन्द के पौत्र रावसिंहाजी खेड़नाथ के पास पाली नगर (गुजरात) पर बारहवीं शताब्दी के आरम्भ में आकर आक्रमण किया। पाली निवासी ब्राह्मणों के पास अतुलित सम्पत्ति थी। होली के दिन जब ब्राह्मण–ब्राह्मणियाँ होली खेलने लग गई, उस दिन रावसिंहाजी ने ब्राह्मणों पर आक्रमण करके इनकी कुल सम्पत्ति पर अपना अधिकार कर लिया।'

आबागढ़ गुजरात में चांपानेर स्टेशन के पास स्थित है। इन्हीं गायनों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पालीवाल ब्राह्मण जाति की उत्पत्ति गुजरात के पालीनगर से ही है।

पालीवाल ब्राह्मण पाली नगर गुजरात से ही आकर मेवाड़ में बसे। विक्रमीय 11वीं – 12वीं शताब्दी में गुजरात में अराजकता के कारण लूटेरे

लूट खसोट किया करते थे। इनसे तंग आकर पाली से निकल कर मेवाड़, मारवाड़, जैसलमेर, बीकानेर, मध्यभारत, पंजाब, संयुक्त प्रान्त आदि स्थानों पर जाकर बस गये। 400–500 वर्ष से अपने आपको अलग–अलग समझने लग गए, पर यह भ्रम मात्र है क्योंकि ये सब मूल स्थान के कारण एक थे।

विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि आजकल जो पालीवाल कहलाते हैं, वे असली पाली से आने वाले ब्राह्मणों की संतान नहीं है क्योंकि विवाहादि के कारण अन्य ब्राह्मण जाति से भी बहुत व्यक्तियों को सम्मिलित कर पालीवाल बना लिए गए। जैसे नागदा, नागर, सांचोरा, औदिच्य, पंचगौड़, श्रीगौड़ आदि जाति वालों से सम्पर्क स्थापित कर पालीवाल नाम दे दिया गया। बिखरे हुए भाइयों को एक सूत्र में बांधने की सेवा 'पालीवाल' व्यापक शब्द ने बहुत अच्छी की। केवल इस शब्द के श्रवण तथा उच्चारण मात्र से जातीय प्रेम झलक जाता है।

राणा राहपजी के 13वीं पीढ़ी में राणा हमीर हुए। ये कुम्भलगढ़ (केलवाड़ा) विशेष रहते थे। इन्होंने हमीरपाल नामक तालाब बनवाया उसकी प्रतिष्ठा वि.सं. 1375 में रखी। पुरोहित देवाजी को वास्तु–कर्म के लिए राणाजी ने कहा कि राणाजी अलनी पटराणी को साथ में न लाकर उपपत्नि को ले आए थे। पुरोहितजी ने जो स्पष्ट वक्ता थे, कहा कि आपको अपनी पटराणीजी का मान ऐसे अवसर पर अवश्य रखना चाहिए। पर राणाजी अपनी उपपत्नि पर विशेष प्रेम होने से यह मानने को तैयार नहीं हुए इस पर देवाजी राणा की पुरोहिताई छोड़कर शिशोदे अपने गांव चले गए।[13] राणाजी ने ज्यों ही हमीरपाल की प्रतिष्ठा देवरामजी के लघु भ्राता साजणजी के बड़े पुत्र राजड़जी से करवाई, पर फिर राणाजी को देवाजी की स्पष्ट वादिता समझ में आ गई और अपनी भूल पर पश्चाताप हुआ।

कुछ समय पश्चात् पुनः देवरामजी को मनाने के लिए स्वयं राणाजी केलवाड़े से सीसोदे, जहां देवाजी का निवास स्थान था, पधारे। उस समय पुरोहितजी अपनी कुलदेवी के मन्दिर में पूजन कर रहे थे इन्हें आत्म गौरव था, अतः इन्होंने मन में सोचा कि यदि मुझे राणा कुछ कटु वचन कहेंगे तो मुझ सहन न होगा, सो इन्होंने हीरकणी (हीरे का कण) खाकर आत्महत्या करली क्योंकि इन्होंने पुरोहिताई तो पहले ही छोड़ दी थी, सो इस बात की तो इन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। राणा इस प्रकार इनसे मिल भी न सके और पश्चाताप करते हुए केलवाड़ा चले गए। जब राणा हमीर मेवाड़ के महाराणा हो गए तब भी पालीवाल ही राजपुरोहित थे और पालीवालों का इसी कारण दिन–दिन उन्नति होने लगी।

राजड़जी यों तो पुरोहित थे ही पर वीर होने के कारण सेनानायक का पद भी इन्हीं को सौंपा। ये वीर योद्धा होने के कारण इन्होंने कई बार युद्ध किया। महाराणा हमीर ने प्रसन्न होकर एवं इनकी वीरता की प्रशंसा करते हुए 4 गांव भाणुजा, गुड़ली, दीयाण और डूब खेड़ा का पट्टा वि.सं. 1392 में कर दिया।[14]

राणा हमीर ने इन्हें भाणुजे के थाणापति बनाए। क्योंकि उस समय डाकुओं का बड़ा जोर था तथा सारे परगणे का भी प्रबन्ध इन्हीं को सौंपा। उस परगणे में मुख्य गांव कणूजा, कठार, धणा, नांदेसमा, गोगून्दा और मचींद थे अर्थात् इस परगणे के चारों और ये गांव आ गए हैं। सभी गांव वालों को कह दिया था कि आप लोग प्रोत राजड़जी की आज्ञा पालन करें क्योंकि ये सिसोदिया के सेनानायक हैं। ये साधारण व्यक्ति नहीं एवं 'अनड़परोत' हैं अर्थात् ये आत्म गौरव की रक्षा करने वाले पुरोहित हैं। ये नतमस्तक नहीं होते। राजड़जी जब सेनापति थे, उस समय सब भील मिलकर दंगा (झगड़ा) किया। उस दंगे को इन्होंने अपनी वीरता से शान्त किया। ये बड़े बुद्धि सागर

थे, इसीलिए इन्होंने विजय प्राप्त की। इसके पश्चात् राजड़जी पुरोहिताई छोड़कर चुंडाजी के साथ सांडवा मांड़वगढ़ गए। ये कौनसे सम्वत् में गए इसका पता नहीं, फिर कुष्ठ निवारण किया। फिर मोकलजी के साथ युद्ध हुआ, इस युद्ध की भंयकरता बड़ी प्रसिद्ध है। मोकलजी इस युद्ध में काम आए। राजड़जी ने इस तरह हिन्दू धर्म की रक्षा की। कुछ समय के पश्चात् चुंडाजी पुरोहित राजड़जी को मांडवगढ़ का अधिकार देकर चित्तौड़ पधारे।

देवीदासजी के पश्चात् नारायणदासजी राजपुरोहित हुए। इनको महाराणा विक्रमादित्य जी ने सं. 1588 में कुंचोली का पट्टा दत्त में दिया। वि. सं. 1628 में महाराणा प्रताप ने बड़गाँव का पट्टा भी इन्हीं को दत्त में दिया। उस समय उदयपुर बस गया था।

समस्त पालीवाल जाति को भी इस बात का गौरव है कि हमने मेवाड़ राज्य की रक्षा की ओर भारत वर्ष को भी इसी ब्राह्मण जाति के स्वतन्त्रता का उपदेश दिया। एक इतिहास प्रेमी लेखक ने नारायणदास जी को 'पालीवाल जाति का प्रकाशमान नक्षत्र', 'सोलहवीं शताब्दी का दधीचि' तथा 'त्याग वीर' की उपाधि से अंलकृत किया।

पाद टिप्पणियाँ –

1) सेवग जेठमल ने इसके पूर्वजों का वर्णन इस प्रकार दिया है – ''भामाशाह का पड़दादा चांदा कावड़िया जो राय की गोत्र ओसवाल दिल्ली का रहने वाला था, उसके बाप–दादे बादशाह की खफगी के कारण लड़ाई में मारे गए थे, उस वक्त वह बच्चा ही था। इसीलिए उसको कावड़ में डालकर मेवाड़ लाए। इससे उसका और उसकी सन्तान का नाम 'कावड़िया' हो गया। चाँद का बेटा तीड़ा और तीड़ा का भारमल्ल हुआ। ये लोग बादशाहों के यहां कोठारी और कामदार थे और उदयपुर में दीवान हो गये थे। दीवान होने के पहिले भी इन लोगों के पास बहुत धन था। इसी से ये शाह कहलाते थे।'' (वीरशासन, 16 दिसम्बर, 1952, पृ. 7)

   डॉ. जगदीशचन्द्र जैन ने अपने शोध प्रबन्ध ''जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज'' में जैन आगम–ग्रन्थों के हवाले से बताया है कि ''सोने के सिक्कों में दीनार अथवा केवड़िक का उल्लेख है जिसका प्रचार पूर्व देश में था।'' संभवतः 'केवड़िक' सिक्के के प्रचुर संग्रह के कारण भारमल्ल के पूर्वज 'केवड़िया' या 'कावेड़िया' या 'कावड़िया' कहलाए।

2) अजमेर के शासक पृथ्वीराज चौहान के दिल्ली पर शासन करने से पहले वहां तोमरवंश का राज्य था।

3) डॉ. रघुवीरसिंह का मत है कि – ''मेवाड़ राज्य के कोष तथा आर्थिक मामलों का कार्यभार प्रताप के राज्यारोहण के समय से ही भामाशाह के हाथ में रहा। अन्य सारे शासकीय मामले प्रधान रामा महासहाणी के अधीन थे। प्रताप द्वारा दिए गए ताम्रपत्रों आदि में सन् 1577 के

उत्तरार्द्ध से भामाशाह का नाम लिखा मिलता है। सन् 1578 में रामा महासहाणी के स्थान पर भामाशाह को मेवाड़ राज्य का प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया। प्रताप के देहावसान के बाद भी भामाशाह इसी पद पर बना रहा।'' (महाराणा प्रताप, पृ. 60)

4) मेवाड़–मुगल संधि का सूत्रधार रंगोजी बोलिया उद्धृत, रजत जयन्ती स्मारिका, बोलिया विकास संस्थान, उदयपुर तृतीय संस्करण – 2017, पृष्ठ 116–128।

5) बेवरिज तुज्के जहांगिरी अंग्रेजी अनुवाद जिल्द 1, उद्धृत, गौरी शंकर हीराचन्द ओझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, द्वितीय भाग, प्रकाशन वैदिक यन्त्रालय, अजमेर, पृष्ठ 273–287

6) वीर विनोद खण्ड प्रथम श्यामलदास, मंयक प्रकाशन, जयपुर (राजस्थान), सन् 1986, पृष्ठ 461–478

7) ओझा गौरी शंकर हीराचन्द उदयपुर राज्य का इतिहास द्वितीय भाग, प्रकाशन वैदिक यन्त्रालय, अजमेर, पृष्ठ 805 से 812

8) श्री येवन्ती कुमार जी बोल्या, (सेवानिवृत्त, वरिष्ठ इंजीनियर विद्युत विभाग एवं अध्यक्ष, बोलिया विकास संस्थान, उदयपुर) के पास निजी संग्रह से उपलब्ध बोल्या वंश के प्रामाणिक अभिलेखों पर आधारित। उक्त लेख का लेखक मेवाड़ राज्य से सम्बन्धित बोल्या घराने के योगदान से सम्बन्धित अप्रकाशित मूल्यवान अभिलेखों को देखने और उनसे सम्बन्धित सामग्री के फोटो कॉपी उपलब्ध कराने हेतु उनके योगदान के लिए आभारी है।

9) प्राचीन इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड, कविराजा श्यामलदास एवं गौरीशंकर हीराचन्द ओझा द्वारा मेवाड़ एवं उदयपुर के बारे में लिखित इतिहास क्रमशः एनाल्स एण्ड एन्टीक्वीटीज ऑफ मेवाड़, वीर विनोद एवं उदयपुर राज्य का इतिहास।

10) गाँव के बुजुर्ग सर्वश्री पृथ्वीराज जी डूँगावत, नारायण लाल जी सोमावत, रामलाल जी सारंगोत, वेणीराम जी गोवल, डॉ. एवं प्रोफेसर गोविन्द लाल जी मेनारिया, जमनाशंकर जी कटारा, भैरूलाल जी व्यास, पन्नालाल जी व्यास, हीरादास जी वैष्णव, श्रीमती गमेरी बाई सोमावत, श्रीमती सोहन बाई गोवल से चर्चा के दौरान प्राप्त जानकारी।

11) डॉ. मिनाक्षी मेनारिया अप्रकाशित शोध प्रबन्ध – चित्तौड़ एक अध्ययन (पुरातात्विक स्त्रोतों के सन्दर्भ में मो.ला.सु.वि. में प्रस्तुत पी. एचडी. शोध के अन्त में दी गई तालिका दृष्टव्य है), सन् 2002

12) पालीवाल ब्राह्मण इतिहास अथवा सरशल वंश प्रबोधनी, लेखक रा. वै. रेवाशंकर पुरोहित, आयुर्वेदाचार्य – अवधूत एवं प्रकाशक चिकित्सक, शिरोमणी, प्रथम बार वि.सं. 2043, ऋषि आश्रम – नागरवाड़ी, उदयपुर

13) डॉ. नीलम मेनारिया अप्रकाशित शोध प्रबन्ध – एकलिंगजी का ऐतिहासिक एवं सांस्कृति अध्ययन मो.ला.सु.वि. में प्रस्तुत पी.एचडी. शोध प्रबन्ध, सन् 2002

14) पुरातत्वीय अवशेष – चीरवा गाँव का शिलालेख, पुराने कुएं, बावड़ियाँ आदि।

परिशिष्ट – मेवाड़ महाराणा द्वारा प्रदत्त महत्वपूर्ण ताम्रपत्र

1) महाराजाधिराज महाराणा जी श्री भीमसिंह जी आदेशातु पाणे री गजसिंग दुर्गादास, जात नागदा, कस्म सिंगण वाव तथा सालोल्यामा है लोकल जमें धरती बीघा साड़ा तेरा 13।। कुड़ा निवाण सुदी तथा घर घरूवा भीखारा पोंल सूधी हाट 1 चोहटा रो वाड़ा जान रायजी रा मन्दिर पाछलो जहा सूधी उदक आघाट करे श्री रामार्पण करे दीदी लागत विलगत सर्व सूधी विगत विघा 11) सिंगण वाव सालोल्यामा है 211) लोक लज में – स्वदत्तां पर दत्तांवा यो हरन्ती वन्सुधरा। षष्ठी वर्ष सहस्त्राणि विष्टायांजायते क्रमी।। प्रत दुवे साह मोजीराम बोल्या लिखतम् पंचोली गिरधरलाल गुलाबोत सम्वत् – 1834 वर्षे फागण विद 12 भीमे।–

(यह उपर्युक्त ताम्र–पत्र मदन मोहन जी धनेश्वर जी जोशी के पास है।)

2) महासत्या की मादड़ी का 750 बीघा का ताम्र पत्र की प्रतिलिपि –

।। श्री रामो जयति।।

श्री गणेशायप्रसादातु श्री एकलिंगजीप्रसादातु

सही भालो

महाराजाधिराज महाराणा श्री भीमसिंह जी आदेशातु जोशी धना धूला जात छोटा पालीवाल बागोरा कुस ग्राम महासता की मादड़ी – परगणा मोई रे जणी मदे धरतो हलु 15 पनरा की धरती बीघा 750 धरती हल 1 एकरी बीघा 50 बामण गूंगला दाहेमा की बेचाव सुदा तो है उदक आघाट करे देवाणा पीवल उनाली वा सीयाली मालमगरो महाराणाजी श्रीअमरसिंहजी वेकुण्ठ पधारता महा. श्रीसंग्रामसिंहजी को सही उदक को तांबा पतर खडम भोग लागत व लगतरू ख वरख घर गो रमा सूदो उदक आगाट रो तांबा–पत्र थो

सो दंगा राडा में जातो रयो सो था अरजाउवेवा पर थौणो निरधार करेने यो तांबा पतर डोली को जमीन को करे देवाणो थाने सो थूं थारो वंशरा खा या पाया जाशी गाम में घर गामोट 12 सूदी कणी बातरी चोलण वेगा नहीं आगल सूं चलू खाता पीता हो जो खाया पाया जा जो जूनो मेटोमती नवी करोमती – स्वदत्तां पर दत्तां वा ये हरन्ती वसुंधरा। षष्ठी वर्ष सहस्त्राणि विष्टयां जायते क्रमी ।।1।। प्रतदुवे खुवास रूगनाथ लिखतां पंचोली वल्लभदास गीरधर लालोत सम्वत् 1865 का वैशाख सुद 9 उदक।

3) मावली के पास मोरडी (मरतडी) एक गांव है उसमें 44 खेड़े के पालीवाल नारायणजी, राधाकिशनजी, भूरीलालजी तथा भूरीलाल जी के पुत्र रविन्द्रकुमारजी निवास कर रहे हैं इनके पास 51 बीघा भूमि है उसके ताम्र पत्र की प्रतिलिपि :–

।। श्रीरामजी।।

सही भाला

सिध श्री महाराणाजी श्री रायमलजी दत्त पर दत्त नामण नंगाजी छोटा पालीवाल मोरडी का जमी बीगा 51) अखरे अकावन रामाअरपण कर दीदी। नीम सीम सूदी आसु कोई खेचल करे जीने श्रीएकलिंगनाथ पूगे। सम्वत् 1544 सावण सुदी 15 द. पंचोली मोणालाल – द. तरवाडी हरीराम रा.....

(इस ताम्र–पत्र को राज ने 1950 आसाड़ में सही माना)

4) महाराणा से पावण (दान–पुण्य का कुछ अंश) बड़े भाणुजेवाली को मिलने का प्रमाण –

स्व. खीमराजजी भण्या (बड़े भाणुजा के पुरोहित) के पास एक हस्तलिखित पत्र मिला उसमें लिखा था कि जब राजलजी राजपुरोहित थे तब

वे दरबार के साथ गया श्राद्ध करने गए तब वे वहीं शान्त हो गए। राजलजी ने बहुत समय तक पुरोहिताई की। पावण वि.सं. 1943–46 तक मिलती रही। पुरोहित देवा जीभावल्या आदि भाईयो ने ऊँकार नाथजी बड़े पुरोहितजी से कुछ रूपये लेकर पावती लिख दी कि अब हमारे भाई आपसे दान पुण्य की कोई पांती नहीं लेंगे।

महाराणा रायमल द्वारा प्रदत्त अप्रकाशित कतिपय ताम्रपत्र –

1) श्री महाराणा रायमल (सन् 1473 – 1508 ई.) द्वारा प्रदत्त परसराम पोखरणा (पुरोहित) सुरजपुरा ग्राम (प्रतापगढ़) का अप्रकाशित ताम्रपत्र–

उक्त ताम्रपत्र श्री पुष्कर पोखरणा, निवासी सवीनाखेड़ा के सौजन्य से प्राप्त हुआ

ताम्रपत्र का मूल पाठ –

।। श्रीरामजी ।।

सिद्ध श्री महाराणा जी श्री श्री रायमलजी का दत्त परदत्त बामण परसराम जी पोखरा प्रोत (पोखरणा पुरोहित) ग्राम प्रोता (गांव पुरोहितों) को श्री रामार्पण कर धरती बीघा ४०० चार सौ नीम सीम सुरजपुरे (यह प्रदत गांव सुरजपुरा प्रतापगढ़ रियासत में था) बामणे मातृ अरपण कर दी दो जो थारे बायोत्तर कर दी दो। अणी री जो कोई न चोलण करसी, जा न श्री एकलिंग नात प्रभु सी पुगसी (श्री एकलिंग नथा पुगसी) संमत् 1444 मती माह सोम सातम दसगत पंचोली किशन लाल का।

ताम्रपत्र लेख सारांश –

ताम्रपत्र के ऊपर सर्वप्रथम ''श्री रामजी'' शब्द उत्कीर्ण है। मेवाड़ के महाराणा सूर्यवंशी होने से वे भगवान राम, श्री गणेश व श्री एकलिंग जी की वन्दना के साथ भूदान, ब्रह्मदान वगैरः करते थे। अधिकत्तर मेवाड़ के शासकों द्वारा प्रदत्त ताम्रानुशासन, शिलालेखों में वे अपने ईष्टदेव भगवान एकलिंग जी के आदेश सूचक स्तुती में ''श्रीरामोजयति'' ''श्री गणेशायप्रसादातु'' व अंत में दायीं तरफ ''श्री एकलिंग प्रसादातु'' उत्कीर्ण कराते। इस ताम्रपत्र में केवल श्री राम की स्तुती कर महाराणा श्री रायमल ने ब्राह्मण पोखरणा पुरोहित को सुरजपुरा गांव ठि. कानोड़ देवालिया में था में पुरोहित कार्य हेतु 400 बीघा भूमि अपनी मातृश्री की स्मृति में दी।

इस ताम्रपत्र में स्पष्ट लिखा है कि मेवाड़ महाराणा रायमल ने पुरोहित परसराम पोखरणा को पुरोहित ब्राह्मण को ग्राम सुरजपुरा में 400 बीघा भूदान मातेश्वरी की स्मृति में ब्रह्मदान में श्रीरामार्पण कर दी। आगे यह भी लिखा गया है कि उक्त प्रदत्त भूमि की नीम–सीम इत्यादि सहित

पुरोहित परसराम ब्राह्मण को बपौती में भूदान कर दिया। इसके साथ यह भी उल्लेखित है कि उक्त ब्रह्मदेय भूमि को जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी इस परिवार को दान में दी है, इसे कोई भी पुनः अधिग्रहित नहीं करे यदि कोई भी ब्रह्मदेय ऐसी या इस प्रकार की दत्त–परदत्त भूमि का अतिक्रमण या अधिग्रहण करता है या करेगा तो उसे एकलिंगनाथ पुगेगा याने वह पाप का भागीदार होगा।

उक्त ताम्रपत्र में कुल 13 पंक्तियां है। अन्तिम पंक्ति में ताम्रपत्र जारी करने का संमत् 1444 याने ईस्वी सन् 1387 सन् उत्कीर्ण है। उस वर्ष माह महीने का सोमवार 7 (सातम्) का दिवस था। इस को जारी करने वाला प्रशासनिक अधिकारी पंचोली किशनलाल के हस्ताक्षर का उल्लेख हुआ है।

2) श्री महाराणा रायमल (सन् 1473 – 1508 ई.) द्वारा प्रदत्त ग्राम जावद (राजनगर, कांकरोली) (पुरोहित छोटा पालीवाल परिवार को प्रदत्त) का अप्रकाशित ताम्रपत्र –

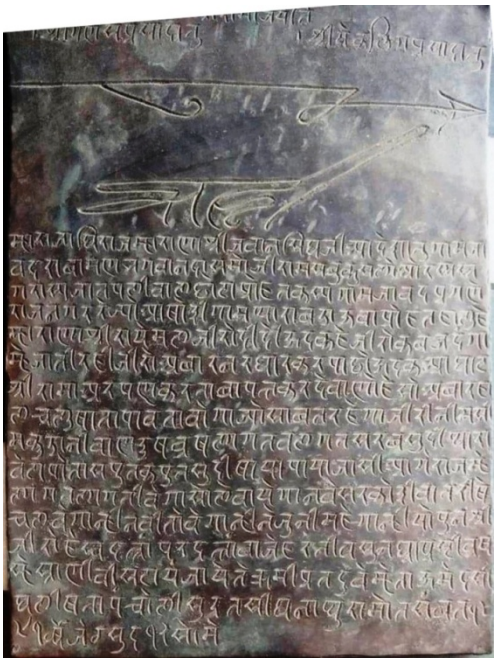

(उक्त ताम्रपत्र जावद ग्राम (कांकरोली) के प्रतिष्ठित परिवार स्व. श्री भगवती लाल जी पालीवाल पिता स्व. श्री परसराम जी पालीवाल (पुरोहित) के पुत्र श्री चन्द्रशेखर पालीवाल एवं पुत्रवधु श्रीमती हंसा पालीवाल के सौजन्य से प्राप्त हुआ है)

ताम्रपत्र का मूल पाठ

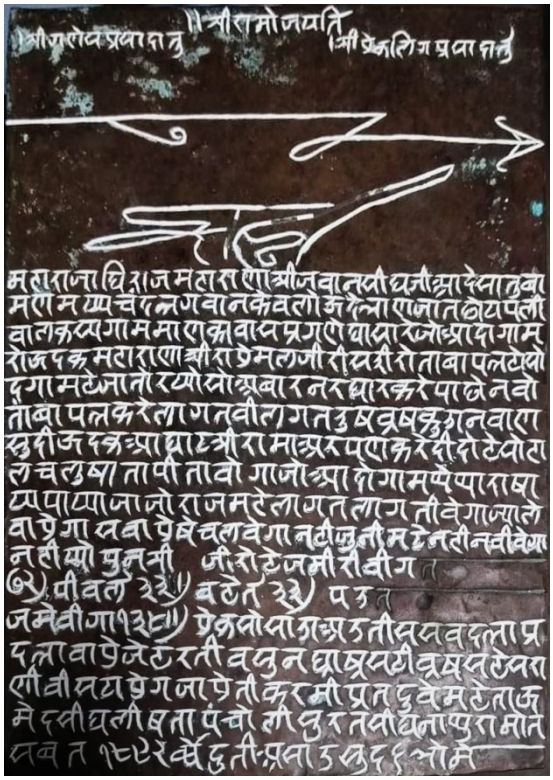

श्री रामोजयति

श्री गणेशाय प्रसादातु **श्री एकलिंग प्रसादातु**

सही

महाराजा धिराज, महाराणा श्री जवान सिंघ जी आदेशातु बा मण मप्प चंद भगवान कंवलो उदेभाणा जात छोटा पली वाल कस्य गाम माणकवास प्रगणे घासा रे जो आदो गाम रो उदक महाराणा श्री रायेमल

जी रो जारी रो तांबा पत्र हो सो दंगा महे जातो रय्यो सो अबार नरधारण करे पाछो नवो तांबा पत्र करे लागत विलगत, रूष व्रष कुआन नवाणा सुदी उदक आधार श्री रामा अरपण करे दी दो है यो चालु षाखाता पीता वो गाजो आदो गाम थें थारा बाप्प दादा रे समय जो राज में लागत विगत वेगा ज्या तो वेगा सवा ऐ बेचला वेगा न ही जूनी मटे नहीं नवी वेगा नहीं यो पुन श्री जी रो है जमीरो विगत ..... ७२) वीवता ३३।) बहेत ३३) पड़त ..... जमे वीगा, १३८।।) एक सौ अड़तीस सवा दला प्र दत्रा वा ऐ जैह रती वसुन्धा प्रसष्टी व्रष सहेसराणी वीसटा ऐ गजा प्रेती कर मी प्रत दुवे महेता उ मेद सीघ लीखता पंचोली सुरत सीघ नाथु रायोत संवत् १८६२ वर्षे दुती आ आसाढ़ सुद ६ भोमे

ताम्र पत्र का अर्थानुवाद –

महाराजाधिराज महाराणा श्री जवानसिंह के आदेशानुसार पूर्व में महाराणा रायमल के समय प्रदत्त ताम्रपत्र ग्राम माणकावास परगना घासा के छोटे पालीवाल ब्राह्मण मप्प चंद भगवान केवलो उदेभाण के नाम जारी कर माणकावास आधा गांव धर्मार्थ भूमि प्रदान करने का पुनः निर्धारण कर नवीनीकृत कर ताम्रपत्र प्रदान किया। इसमें उल्लेखित कुल भूमि 138½ बीघा – 72 बीघा पीवल, 33¼ मध्यम, 33 बीघा पड़त कुल एक सौ साड़े अड़तीस बीघा भूमि प्रदान की। इसमें उक्त भूमि के नींव सीम समस्त वृक्ष, रूंख व कुआं सहित कर लाग बाग जो पहले से लागू की उसे चालू रखी। नया कर लाग बाग नहीं लगने का वचन देते हुए धर्म (उदक आधार) पुण्यार्थ दी। इसमें अन्तिम पंक्तियों में दान–पुण्य की परम्परानुसार शास्त्रोक्त शपथ का उल्लेख हुआ है कि दानदाता द्वारा प्रदत्त उक्त भूमि को कोई भी पुनः अधिगृहित नहीं करेगा। यदि करेगा तो उसे सहस्त्र वर्षों तक नरकीय जीवन यापन करने का पाप लगेगा।

अन्तिम पंक्तियों में ताम्रपत्र नवीनीकरण का समय वि.सं. 1892 के द्वितीय आषाढ़ माह की सुदी छठ मंगलवार दिया है। महाराणा के आदेश से इसकी प्रति प्रदान करने वाले अधिकारी मेहता उम्मेदसिंह लिखने वाला पंचोली सुरतान सिंह नाथु रामोत का नाम उल्लेखित है। (ई. सन् 1835 का है)

सौजन्य :– तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, चीरवा की संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो. नीतू मेनारिया को महाविद्यालय के शैक्षणिक अध्ययनार्थ, ग्राम माणकावास के सरपंच श्री युधिष्ठिर पुरोहित के पास उपलब्ध ताम्रपत्र को इन्हें पढ़ने हेतु बताया व उसकी फोटो कॉपी दी। डॉ. नीतू मेनारिया ने इसकी प्रति तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान चीरवा के पुस्तकालय में अध्ययनार्थ सुरक्षित रखी।

ताम्रपत्रों की खोज खबर : एक सर्वेक्षण –

मेवाड़ के ताम्रपत्रों में राज्य के चिन्ह सूर्य एवं एक तरफ चन्द्रमा, शिलालेख या ताम्रपत्र पर सबसे ऊपर ''श्री रामोजयति'' बाईं तरफ श्री गणेशाप्रसादातु तथा दायीं तरफ ''श्री एकलिंगजी प्रसादातु'' सूचक हिन्दू व सनातन धर्म के देवों की स्तुति के साथ ताम्रपत्र या अभिलेखों में सलूम्बर का भाला व भींडर के अंकुश सूचक चिन्ह के नीचे उसकी प्रामाणिकता के लिए अधिकारिक सत्यपान सूचक सही शब्द लिया जाता था। कई अभिलेखों में जो सूरह लेख है वहां भूदान वहां गर्दभ या गाय वत्स के चित्र है। सती स्मारकों के ऊपर सूर्य चन्द्र एवं सबसे नीचे सतीमाता या शहीद के चित्र घोड़े पर सवार योद्धा (स्व.) के चित्र उत्कीर्ण किये गये हैं।

ताम्रपत्र का मूल पाठ

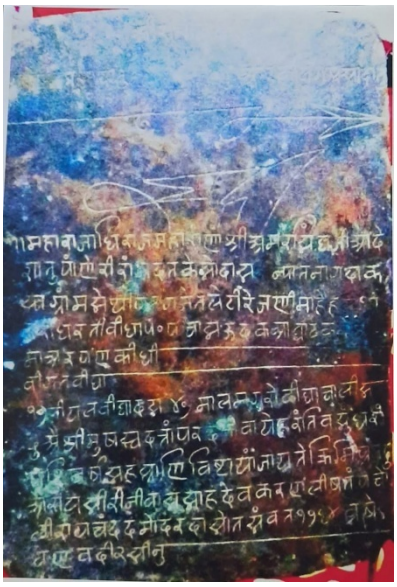

1

श्री रामोजयति

श्री गणेशाय प्रसादातु **श्री एकलिंग प्रसादातु**

सही

महाराजा धिराज, महाराणा श्री अमरसिंह जी आदेशातु पाणेरी रामदत्त केसोदास न्यात नागदा कस्य ग्राम सेंथी प्रगने तलेटी री जणी माहे धरती वीघा 40 (50 बीघा) पचास उदक आधार अरपण कीधी .... वीगत वीघा .... 10) सींयाल वीघा दस, 40) माल मगरो वीघा चालीस दुअै श्रीमुख स्वदत्रां परदते हे वाये हरंति वसुंधरा षष्टि वर्ष सहस्त्राणि विष्टायां जायते क्रिमि ..... श्री राय श्री री जीवाय शाह देव करणां

लीखतं श्री रायचंद दमोदर दासोत संवत् 1764 वर्षे श्रावण वदी 2 सीनु (श्रावण वदी 2, शनि) .....

ताम्र पत्र का अर्थानुवाद –

यह ताम्र पत्र महाराणा अमरसिंह के आदेश से प्रगणे तलेहटी (चित्तौड़) ग्राम सेंथी में पाणेरी रामदत्त केसोदत्त जो नागदा (ब्राह्मण) है, को धरती कुल 50 बीघा उदक आघात मातृश्री (भूमि दान में देय) को अरपण कर ताम्रपत्र प्रदान किया गया। जिसका ब्यौरा उक्त ताम्रपत्र में दिया गया है। 10 बीघा पीवलद्रस व 40 बीघा माल मगरे चालीस है। उक्त ताम्रपत्र को जारी करने का वर्ष वि.सं. 1764 श्रावण बदी 2 शनिवार अंकित है। अर्थात् सन् 1707 ईस्वी का है। महाराणा अमरसिंह द्वितीय के समय का है।

सौजन्य :– उक्त ताम्रपत्र की छायाप्रति इतिहासकार डॉ. जी. एल. मेनारिया, निदेशक तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, चीरवा के सौजन्य से प्राप्त हुआ। जो वर्तमान में तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान, चीरवा के पुस्तकालय में देखा जा सकता है। यह ताम्रपत्र मूल ताम्रपत्र है जो अभी तक अप्रकाशित है।